जैन
पथप्रदर्शक
ए-4, बापूनगर, जयपुर - 302015 (राज.)
नैतिक एवं सामाजिक चेतना का अग्रदूत निष्पक्ष पाक्षिक

बुद्धिमत्ता और अनुभव का कमाई से कोई सम्बन्ध नहीं है। कमाना और गमाना तो पुण्य-पाप का खेल है।

ह्न आप कुछ भी कहो, पृष्ठ-55

वर्ष : 28, अंक : 20 | **सम्पादक :** पण्डित रतनचन्द भारिल्ल | आजीवन शुल्क : 251 रुपये
जनवरी (द्वितीय) 2006 | **प्रबन्ध सम्पादक :** पं. संजीवकुमार गोधा व पं. जितेन्द्र वि. राठी | वार्षिक शुल्क : 25 रु., एक प्रति : 2/-

पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव सानन्द सम्पन्न

कोलकाता (प. बं.) : यहाँ भवानीपुर-पद्मोपुकुर क्षेत्र में नवनिर्मित श्री महावीरस्वामी जैन मन्दिर हेतु श्री कुन्दकुन्द कहान दिगम्बर जैन स्वाध्याय मन्दिर ट्रस्ट के तत्त्वावधान में दिनांक 26 दिसम्बर 05 से 1 जनवरी 06 तक श्री महावीर दिगम्बर जिनबिम्ब पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव का आयोजन अनेक मांगलिक कार्यक्रमों पूर्वक सानन्द सम्पन्न हुआ।

महोत्सव में गुरुदेवश्री कानजीस्वामी के सी. डी. प्रवचनों के अतिरिक्त विद्यावारिधि डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल के पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव पर प्रासंगिक प्रवचन हुये।

आपके अतिरिक्त पण्डित अभयकुमारजी शास्त्री देवलाली, पण्डित वीरेन्द्रकुमारजी आगरा, पण्डित प्रदीपकुमारजी झांझरी उज्जैन, पण्डित अशोककुमारजी लुहाड़िया मंगलायतन आदि विद्वानों के प्रवचनों का लाभ समाज को प्राप्त हुआ।

पंचकल्याणक की सम्पूर्ण प्रतिष्ठा-विधि बाल ब्र. पण्डित जतीशचन्दजी शास्त्री सनावद के प्रतिष्ठाचार्यत्व एवं निर्देशन में सहयोगी बाल ब्र. धन्यकुमारजी बेलोकर गजपंथ, पण्डित मधुकरजी जैन जलगाँव, पण्डित धनसिंहजी पिडावा, पण्डित राजकुमारजी शास्त्री बांसवाड़ा, पण्डित ऋषभकुमारजी छिंदवाड़ा, पण्डित अजितजी शास्त्री अलवर, पण्डित सुबोधजी शाहगढ़, पण्डित मनीषजी पिड़ावा, पण्डित संदीपजी बड़ामलहरा, पण्डित अशोकजी शास्त्री रायपुर, पण्डित आशीषजी टीकमगढ़, पण्डित गजेन्द्रजी बड़ामलहरा आदि विद्वानों ने सम्पन्न कराये।

जिनमंदिर में प्रथम तल पर विशाल स्वाध्याय भवन एवं भूतल पर वीतराग-विज्ञान पाठशाला का उद्घाटन किया गया। द्वितीय तल पर आकर्षक जिनमंदिर तथा भव्य शिखर के कक्ष में विद्यमान बीस तीर्थंकर जिनालय व खड्गासन त्रिमूर्ति जिनमंदिर में वीतरागी भाववाही प्रतिमायें प्रतिष्ठा विधि पूर्वक विराजमान की गईं। साथ ही पंचपरमागम एवं चार अनुयोगमय रत्नजड़ित जिनवाणी, छत पर छतरीनुमा वेदी में आठ पूर्वाचार्यों के चरण विराजमान किये गये।

सांस्कृतिक कार्यक्रमों में मंगलायतन के विद्यार्थियों द्वारा प्रस्तुत भगवान बाहूबली नाटक एवं मण्डलेश्वर मण्डल की ओर से चन्दनबाला नाटिका विशेष आकर्षण का केन्द्र रहे।

पंचकल्याणक में अ.भा. जैन युवा फैडरेशन मेरठ के 150 सदस्य, श्री टोडरमल सि. महाविद्यालय जयपुर तथा आचार्य अकलंक शिक्षण संस्थान बांसवाड़ा के छात्रों का सराहनीय योगदान रहा। ●

अखिल भारतीय विद्वत्सम्मेलन सम्पन्न

श्रवणबेलगोला (कर्नाटक) : यहाँ महामस्तकाभिषेक की पूर्व बेला में गोम्मटेश्वर भगवान श्री बाहूबलीस्वामी महामस्तकाभिषेक महोत्सव समिति 2006 द्वारा आयोजित दिनांक 28 दिसम्बर से 1 जनवरी, 06 तक श्री क्षेत्र श्रवणबेलगोला में शताधिक विद्वानों की उपस्थिति में विद्वत् सम्मेलन सानन्द सम्पन्न हुआ।

प्रतिदिन 3 सत्रों में विभिन्न विद्वानों द्वारा आगम, अध्यात्म, भाषा, शिल्प, कला, संस्कृति संबंधी विभिन्न विषयों पर सारभूत विवेचना प्रस्तुत की गई। समागत विद्वानों में डॉ. वाचस्पति उपाध्याय दिल्ली, डॉ. रंजनसूरिदेव, डॉ.राजाराम जैन, डॉ. प्रेमसुमन जैन उदयपुर, अध्यात्मरत्नाकर पण्डित रतनचन्द भारिल्ल जयपुर, श्री नीरज जैन सतना, डॉ. रमेशचन्द जैन बिजनौर, डॉ. कुलभूषण लोखण्डे, डॉ. नलिन के. शास्त्री, प्रो. हम्पानागराजैया, श्री महावीरराज गेलडा आदि लगभग 130 से अधिक विद्वान देश के कोने-कोने से पधारे। जैनसमाज के विद्वानों की चारों शीर्षस्थ संस्थाओं के पदाधिकारी व प्रतिनिधियों की उपस्थिति से सम्मेलन गौरवान्वित हुआ है।

पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट से जुड़े विद्वानों में सर्वश्री पण्डित रतनचन्द भारिल्ल, डॉ. राजेन्द्रकुमार बंसल, डॉ. सुदीप जैन, डॉ. अशोक गोयल शास्त्री, पण्डित शांतिकुमार पाटील, पण्डित जम्बूकुमार शास्त्री, डॉ. अनेकान्त जैन, पण्डित शांतिसागर शास्त्री, पण्डित नाभिराजन शास्त्री तथा श्री अखिल बंसल मुख्य थे।

दिन में सम्पन्न हुये सभी सत्रों में आचार्य वर्धमानसागरजी, आचार्य पद्मनन्दीजी, आचार्य तपसागरजी, आचार्य कुमुदनन्दीजी, आचार्य वरदत्तसागरजी, आचार्य कुशाग्रनन्दीजी, आचार्य गुणनन्दीजी, उपाध्याय कामकुमारनंदीजी आदि की ससंघ उपस्थिति व प्रासंगिक उद्बोधन तथा भट्टारक श्री चारुकीर्तिजी-श्रवणबेलगोला की उपस्थिति व मार्गदर्शन प्राप्त हुआ।

इस विभिन्न विचारधारावाले विद्वत् सम्मेलन से जो जैन विद्वानों में एकता का वातावरण बना वह इस सम्मेलन की विशेष उपलब्धि थी।

अन्त में दिनांक 2 से 5 जनवरी तक समागत सभी विद्वानों को उनकी इच्छानुसार कर्नाटक/तमिलनाडु के प्रमुख तीर्थों की सामूहिक यात्रा श्री क्षेत्र श्रवणबेलगोला की ओर से कराई गई।

ज्ञातव्य है कि डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल भी 11 से 19 फरवरी तक श्रवणबेलगोला में रहेंगे। ●

कहानी

एक केटली गर्म पानी

ह्न डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल

ब्रह्ममुहूर्त की महिमा बड़े-बूढ़ों से भी सुनता आ रहा हूँ और पुस्तकों में भी पढ़ी है। कहते हैं यह दिन का सबसे बढ़िया समय होता है, जिसे हम सोते-सोते व्यर्थ ही गँवा देते हैं। यह हमारी अल्पनिद्रा का समय है। इस समय कोई भी गहरी नींद में नहीं होता। यह भी कहा जाता है कि ब्रह्ममुहूर्त में आये स्वप्न सच्चे होते हैं।

जो भी हो, पर आज मैंने इसी ब्रह्ममुहूर्त में एक स्वप्न देखा कि मेरा बचपन लौट आया है। मुझमें वही बचपना आ गया है, जो पचास वर्ष पूर्व था। यद्यपि आज मैं पचपन वर्ष का हूँ, बहुत दुनिया देख चुका हूँ; पर बचपन का जो दृश्य आज स्वप्न में देखा, वह बड़ा ही विचित्र है।

मैंने देखा कि मैं अपने ग्रामीण घर में हूँ। मेरी माँ हैं, पिता हैं, भाई हैं, बहिन है और वही ग्रामीण परिवेश हैं, जो मेरे बचपन में था।

अब तो मैं ठोकरें खा-खाकर बहुत कुछ शान्त हो गया हूँ, पर बचपन में बहुत ही तेज तर्रार और क्रोधी प्रकृति का था। लोग तो आज भी कहते हैं कि मैं आज भी वैसा ही हूँ, पर अभी तो बात बचपन की चल रही है। मैं उस समय अपनी हठ के लिए, जिद के लिए बहुत कुछ बदनाम हो चुका था। मेरी इमेज एक जिद्दी बालक की बन चुकी थी और सारा ही परिवेश मेरे इस स्वभाव को बदलने के लिए कृतसंकल्प था। मेरी हर बात को जिद मान लिया जाता था और सभी उसके विरुद्ध मोर्चा जमा लेते थे।

मैं यह नहीं मानता कि वे सब मुझे प्यार नहीं करते थे, चाहते नहीं थे; चाहते थे, पर उन्हें इस बात की बड़ी चिन्ता थी कि यदि मेरा यह स्वभाव नहीं बदला तो मेरा जीवन बर्बाद हो जायेगा।

अतः सबने एक ही लक्ष्य बना लिया था कि जैसे भी हो मुझे सुधारना है और सभी लोग मिल-जुलकर इस महायज्ञ में प्राणपण से जुट गये थे।

प्रातःकाल का समय था। लगभग आठ-नौ बज चुके होंगे। सर्दियाँ आरंभ हो चुकी थी और सभी लोग गर्म-पानी से नहाने लगे थे। सभी लोग नहा चुके थे और मैं भी नहाने के लिए एक केटली गर्म-पानी चाहता था। पर किसी का ध्यान इस ओर न था। मैंने दो-चार बार अपनी माँग दुहराई पर सभी अपने-अपने काम में व्यस्त थे; क्योंकि सब काम वाले थे न? जब धीमी आवाज से काम न चला तो मेरे स्वर में तेजी आ गई और मेरी जायज माँग जिद समझ ली गई, और सभी का सुधार अभियान आरंभ हो गया।

यद्यपि यह बात सत्य हो सकती है कि मैं उस समय नासमझ था; पर उतना नहीं, जितना कि लोग समझते थे। अपनी समझ से तो मैं काफी समझदार हो गया था, पर लोग माने तब न !

मेरी एक मजबूरी थी कि मेरी मन्द आवाज कोई सुनता न था और तेज आवाज को जिद समझ लिया जाता था। बस फिर क्या था, सभी का सुधार-अभियान आरंभ हो जाता। अब यह बात एक दिन की न रह गई थी। लगभग रोज ही यह सब होने लगा था। हमारे परिवार के लिए इसने एक समस्या का रूप ले लिया था। था कुछ नहीं, पर·····।

हाँ, तो मुझे नहाने के लिए मात्र एक केटली गर्म पानी चाहिए था, जो कि सबको प्राप्त हो चुका था, पर मुझे नहीं मिल पा रहा था। उपदेश, आदेश, धमकियाँ तो बराबर मिल रही थीं, पर पानी नहीं; क्योंकि सभी की दृष्टि में मुझे पानी की नहीं, सुधारने की आवश्यकता थी। सभी के पास मुझे उपदेश देने के लिए पर्याप्त समय था, पर पानी देने के लिए नहीं; क्योंकि सभी को अपने-अपने काम करने थे, सभी काम वाले थे न !

हारकर मैंने स्वयं पानी गर्म करने की ठानी। यद्यपि मैं पाँच वर्ष का ही था, पर यह बात नहीं कि मैं पानी गर्म नहीं कर सकता था। कर सकता था, अवश्य कर सकता था; पर किसी का थोड़ा-बहुत सहयोग मिल जाता तो। पर वहाँ तो असहयोग का ही नहीं, विरोध का वातावरण बन रहा था।

अब मुझे सचमुच ही जिद सवार होने लगी थी। मुझे भी लगा था कि मैं जिद कर रहा हूँ। अब मैंने एकला-चल की मुद्रा बना ली थी। अतः बिना किसी के सहयोग के ही घड़े से केटली में पानी डालने लगा तो सारा घड़ा ही औंधा हो गया। घड़ा फूट भी सकता था; पर गनीमत रही कि फूटा नहीं। फिर भी चारों ओर से चिल्लाहट आरंभ हो गई, कोहराम मच गया।

मैं विजयी मुद्रा में खड़ा हो गया। यद्यपि मैं कुछ भी बोल नहीं रहा था, पर अपनी मौन मुद्रा से ही कह रहा था कि लो देख लो अपने असहयोग का परिणाम। थोड़ी-बहुत समझ हो तो अब भी समझ जावो, अन्यथा और भी खतरनाक परिणाम भुगतने पड़ सकते हैं; पर वहाँ कौन समझता मेरी चेतावनी को; क्योंकि सब बड़े हो गये थे न; अपने को समझदार समझने लगे थे न; नासमझ तो अकेला मैं ही था, जिसे सही रास्ते पर लाना सबका, सबसे बड़ा धर्म बन गया था।

एक ओर से आवाज आई ह्न **'दे दो न एक केटली गर्म पानी उसे?'**

लगता है किसी को या तो मुझ पर दया आ गई थी या फिर वह अधिक नुकसान की आशंका से आतंकित हो गया था? पर सभी ने एक स्वर से उसकी बात का विरोध किया; क्योंकि उनका मानना था कि इसप्रकार जिद पूरी करने से बच्चे बिगड़ जाते हैं।

मुझे सचमुच एक केटली गर्म पानी की आवश्यकता है यह सत्य किसी भी समझदार की समझ में नहीं आ रहा था; क्योंकि वे सब बहुत अधिक समझदार हो गये थे न !

अब मैं अभिमन्यु की भाँति अकेला ही युद्ध के मैदान में था। एक ओर मैं अकेला और दूसरी ओर सातों महारथियों के समान मुझे घेरे हुए पूरा परिवार।

यद्यपि सभी को अपने-अपने बहुत जरूरी काम थे, जिनकी वजह से मुझे कोई एक केटली पानी नहीं दे पाया था; पर अब तो आपातकाल आ गया था। अतः सभी काम स्थगित होना ही थे, सो हो गये; अब तो सबको एक मात्र काम मेरे इस आतंकवाद से निपटने का ही था; क्योंकि इससे अब सम्पूर्ण परिवार संकट में पड़ गया था।

मुझ जैसे हिटलर के रहते हुए घर में सुख-शान्ति कैसे रह सकती थी? कुछ भी हो, पर मुझ पर तो उन्हें काबू पाना ही था।

बीच में निहत्था मैं और चारों ओर पूरा परिवार। इसप्रकार मोर्चा जम रहा था। एक अभिमन्यु से सारे साम्राज्य को खतरा खड़ा हो गया था। अतः अब कोई न्याय-अन्याय का प्रश्न नहीं रह गया था। जैसे भी हो खतरा तो टालना ही था।

यद्यपि यह खतरा एक केटली गर्म-पानी से टल सकता था, पर इसमें सारे परिवार की इज्जत का सवाल था, सारे परिवार की प्रतिष्ठा दाव पर लग गई थी। मात्र बात इतनी ही नहीं थी, इससे बच्चे के बिगड़ जाने की भी पूरी-पूरी संभावना थी। बच्चे के नहीं रहने से परिवार का क्या बिगड़ता है, पर बिगड़े बच्चे से तो·····।

(शेष पृष्ठ 11 पर....)

सम्पादकीय –

नींव का पत्थर

18

ह्न रतनचन्द भारिल्ल

(गतांक से आगे .....)

कर्मकिशोर ने अगले प्रश्न की भूमिका बनाते हुए कहा ह्न ''यह तो आपका कहना सही है कि मोहनी का कोई दोष नहीं है; परन्तु उसकी निमित्तता में जो तुम्हें मानसिक संताप और देहिक दुःख हुआ, उस विकट एवं विषम परिस्थिति में आपकी मनःस्थिति कैसी रही? जब पारिवारिक परेशानियाँ, सामाजिक समस्यायें और केंसर रोग की असह्य शारीरिक वेदना से तुम जूझ रहे थे, तब किस विचारधारा के आलंबन से आप स्वयं को संभाल सके, मन को संतुलित रख पाये? आखिर मोहनी ने तुम्हें मँझधार में तो छोड़ ही दिया था न! ऐसी स्थिति में सामान्य जन तो बुरी तरह घबरा जाते हैं, होश-हवास खो बैठते हैं, हृदयाघात से उनका प्राणान्त तक हो जाता है, परन्तु आपके माथे पर तो एक सिकुड़न तक दिखाई नहीं दी।

मुझसे आपकी वह दुःखद स्थिति छिपी हुई नहीं है। मैं उन सब हालातों का प्रत्यक्षदर्शी रहा हूँ। जब तुम रोग शैया पर पड़े मरणासन्न स्थिति में थे तब मेरी बेटी असाता तुम्हारे साथ ऐसी आँख मिचौनी कर रही थी कि तुम्हारे परिजन-पुरजन तो तुम्हारे जीवन से निराश हो ही गये थे, डॉक्टरों ने भी भगवान का नाम सुनाने की सलाह दे दी थी; फिर भी तुम्हारे चेहरे पर आते-जाते भावों से तुम्हारे मुखमंडल पर निर्भयता, निशंकता एवं प्रसन्नता भासित हो रही थी। मैं यह जानना चाहता हूँ ह्न इसका क्या रहस्य है?''

कर्मकिशोर ने कहा ह्न ''मुझे आश्चर्य इस बात का है कि ह्न तुम अत्यन्त पीड़ाप्रद रोग से घिरे थे। तुम मौत के मुख में भी मृत्युभय से आतंकित नजर नहीं आये। भयंकर वेदना से भी तुम भयभीत नहीं हुए, वह वेदना तुम्हारे अन्तर्मुखी उपयोग को विचलित नहीं कर पायी। समाधिसाधना में तुम पूर्णरूपेण सफल हुए, जो आदर्श बातें अब तक केवल शास्त्रों में पढ़ीं थी, वे तुम्हारे जीवन में प्रत्यक्ष देखकर सुखद आश्चर्य हो रहा है। यह सब कैसे हुआ? मेरी यह जिज्ञासा है। तुम्हारे पास ऐसा कौन सा महामंत्र है, जिसके अवलम्बन से ह्न ऐसी विकट परिस्थितियों में तुम प्रसन्न रहे?

जीवराज ने अपने सप्तभयों से मुक्त रहने का रहस्योद्घाटन करते हुए बताया। ''कर्मकिशोर! तेरी जिज्ञासा की पूर्ति करने के पहले मैं मोहनी और समता को धन्यवाद दिये बिना नहीं रह सकता। उन दोनों का मेरे ऊपर बहुत बड़ा उपकार है।

निःसंदेह मोहनी ममता की मूर्ति है, उसने अपने कर्तव्य के निर्वाह में कोई कोर-कसर नहीं रखी। वह जब तक मेरे साथ रही, पूर्ण समर्पण के साथ मेरी बनकर रही। वह अपने कर्तव्य के प्रति पूर्ण ईमानदार है, उससे मुझे कोई शिकायत नहीं है। मेरी ही शतप्रतिशत भूल रही जो मैं समता जैसी सती सावित्री को छोड़कर मोहनी पर मूर्छित हो गया। मैं उसे इस कारण धन्यवाद देना चाहता हूँ कि उसके द्वारा की गई उपेक्षा अस्वाभाविक नहीं है कोई भी मोहनी जैसी नारी उस परिस्थिति में वही करती, जो मोहनी ने किया और उसकी उपेक्षा मेरे लिए वरदान बन गई। यदि मोहनी उपेक्षा नहीं करती तो संभव था कि मैं सन्मार्ग में नहीं आता।

समता को तो मैं भव-भवान्तरों में भी नहीं भूलूँगा; क्योंकि उसने तो मेरा मनुष्यभव ही सार्थक कर दिया है। उसने मेरे द्वारा दिये गये दुःखों को सर्वथा भुलाकर एवं मेरे द्वारा किए दुर्व्यवहार की किंचित् भी परवाह न करके कोई प्रतिक्रिया प्रगट किए बिना मुझे निस्वार्थ भाव से पुनः अपना लिया। यह कोई साधारण नारी का काम नहीं है। वह सचमुच महान है। वह मेरी पत्नी होकर भी अपने सद्गुणों से मेरे लिए श्रद्धेय बन गई है।

समता में एक सुयोग्य पत्नी के सभी गुण विद्यमान हैं। किसी कवि ने सुयोग्य पत्नी के गुणों का बखान करते हुए ठीक ही कहा है ह्न

''कार्येषु मंत्री भोज्यसु माता।
सेवासु दासी भोग्येसु रम्भा।।

अर्थात् योग्य पत्नी पति के कार्यों में मंत्री का काम करती है, सही सलाह देती हैं; माता की भाँति स्नेह से भोजन कराती हैं। दासी की भाँति सेवा में तत्पर रहती है और लौकिक सुखों में पत्नी धर्म निभाती हैं। धर्म के कार्यों एवं परोपकार में भी समता अग्रगण्य है। इसतरह सभी उपर्युक्त गुण समता में कूट-कूट कर भरे हैं।''

जीवराज ने आगे कहा ह्न ''कर्मकिशोर! तुझे भलीभाँति ज्ञात है कि मैं आजकल वीतरागी देव, निर्ग्रन्थ गुरु और अनेकांतमयी धर्म का कट्टर व परम भक्त हो गया हूँ। इसकी वजह यह नहीं कि उनकी कृपा से मेरे दुःख दूर हो गये; बल्कि समता ने जब मुझे देव के स्वरूप को समझाते समय सर्वज्ञता का स्वरूप समझाया और बताया कि सर्वज्ञता ही वीतराग धर्म प्राप्ति का प्रबल साधन है। इस अपेक्षा सर्वज्ञदेव ही धर्म के प्राण हैं। सच्चे देव की सर्वज्ञता की श्रद्धा से हमें वीतरागता रूप धर्म कैसे प्रगट होता है? राग-द्वेष कैसे कम होते हैं? तथा कषायें कैसे कृश होती हैं? और निराकुल सुख-शान्ति कैसे प्राप्त होती है? ह्न यह सब समझाया तो मेरी तो आँखें फटीं की फटीं रह गईं। ह्न ऐसा मैंने कभी सोचा ही नहीं था।

तीर्थंकर भगवान वीतरागी, सर्वज्ञ एवं हितोपदेशी होते हैं ह्न ऐसी परिभाषायें तो बचपन में पढ़ीं थीं; परन्तु उनकी श्रद्धा से अपनी आत्मा में सुख-शान्ति का स्रोत कैसे बहने लगता है? इसकी खबर मुझे नहीं थी ह्न ऐसा किसी ने बताया ही नहीं। इस दृष्टि से समता मेरी गुरु भी बन गई।

समता ने संकट के समय धैर्य बंधानेवाले भैया भगवतीदासजी का निम्नांकित भजन सुनाते हुए कहा ह्न

'जो-जो देखी वीतराग ने सो-सो होसी वीरा रे!
अनहोनी होसी नहिं कबहूँ, काहे होत अधीरा रे!
समयो एक घटे नहिं बढ़सी, जो सुख-दुःख की पीरा रे!
तू क्यों सोच करे मन मूरख होय वज्र ज्यों हीरा रे!!'

तात्पर्य यह है कि सर्वज्ञदेव के केवलज्ञान में प्रतिबिम्बित हुए समस्त द्रव्य-गुण-पर्याय के अनुसार जिस जीव का जब जो सुख-दुःख, जीवन-मरण, असह्य पीड़ा आदि होनेवाले हैं, वे तो होकर ही रहेंगे, उसे कोई टाल नहीं सकता। इस श्रद्धा और विश्वास के बल पर सभी प्रकार के दुःख सहने की सामर्थ्य सहज में प्रगट हो जाती है।

कविवर बुधजनजी ने भी उपर्युक्त बात का ही पोषण करते हुए अपने

(शेष पृष्ठ 10 पर....)

कोटा पंचकल्याणक विज्ञापन

कोटा पंचकल्याणक विज्ञापन

तत्त्वचर्चा

प्रवचनसार का सार

43

ह्न डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल

(गतांक से आगे...)

यहाँ गाथा १५१ की टीका का निम्नांकित कथन भी द्रष्टव्य है ह्न

यहाँ तात्पर्य यह है कि ह्न आत्मा की अत्यन्त विभक्तता सिद्ध करने के लिए व्यवहारजीवत्व के हेतुभूत पौद्गलिक प्राण उच्छेद करने योग्य है।

यहाँ 'उच्छेद करने योग्य है' का तात्पर्य 'मारने योग्य' नहीं है; क्योंकि यदि ऐसा अर्थ हो तो वह हिंसा हो जायेगी। पौद्गलिक प्राण मैं नहीं हूँ ह्न ऐसा मानने का नाम उच्छेद करने योग्य है।

जो व्यवहारजीवत्व से विभक्तता सिद्ध कर लेगा, वही अत्यन्त विभक्त होगा ह्न ऐसा सुनकर, पढ़कर कोई कहे कि यह तो स्थूलविभक्त हुआ, सूक्ष्मविभक्त नहीं। अरे भाई ! ऐसा नहीं है।

इसी संबंध में मैं एक बात और कहना चाहता हूँ कि हमारे यहाँ एक सूक्ष्म-स्थूल कहने का प्रकरण भी प्रचलन में आ गया है।

इसके संबंध में टोडरमलजी ने सूक्ष्म की परिभाषा देते हुए कहा है कि जो केवलज्ञानगम्य है अर्थात् जो बात हमारे ज्ञान में सीधी नहीं आ सकती; उसे सूक्ष्म कहते हैं और जो अपने क्षयोपशम ज्ञान में आ सकती है, उसे स्थूल कहते हैं।

इसीलिए टोडरमलजी ने करणानुयोग को सूक्ष्म कहा है और अध्यात्म को स्थूल कहा है।

अरे भाई ! अपनी आत्मा का अनुभव अपने आपको हो सकता है इसलिए वह स्थूल है; लेकिन दूसरे की आत्मा का अनुभव स्वयं को नहीं हो सकता है; अत: वह सूक्ष्म है। स्वयं का सुख-दु:ख जानना स्थूल है और दूसरे का सुख-दु:ख जानना सूक्ष्म है।

अरे भाई ! चरणानुयोग का कथन सूक्ष्म है या स्थूल ?

आलू में अनंत जीव हैं ह्न यह बात सूक्ष्म है; क्योंकि वे सर्वज्ञ की वाणी द्वारा ही जाने जा सकते हैं; दूरबीन से नहीं देखे-जाने जा सकते हैं। सुमेरु पर्वत एक लाख योजन का होने पर भी हम उसे प्रत्यक्ष नहीं जान सकते; अत: सुमेरु पर्वत भी सूक्ष्म ही है।

जिन्हें हम प्रत्यक्ष देखते-जानते हैं, वे स्थूल हैं और जिन्हें सर्वज्ञ-कथित आगम और अनुमान से जाना जाता है, वे केवलज्ञानगम्य बातें सूक्ष्म हैं।

ये सूक्ष्म-स्थूल की परिभाषायें समझना आवश्यक ही नहीं, अपितु अनिवार्य है।

तदनन्तर प्रवचनसार में १५२ वीं गाथा का वर्ण्यविषय बतानेवाली उत्थानिका का निम्नांकित कथन भी द्रष्टव्य है ह्न

''अब फिर भी, आत्मा की अनन्त विभक्तता सिद्ध करने के लिए, व्यवहारजीवत्व की हेतुभूत ह्न गतिविशिष्ट (देव-मनुष्यादि) पर्यायों का स्वरूप कहते हैं।''

इसके बाद गाथा १५२ की टीका का हिन्दी का भाव इसप्रकार है ह्न

''स्वलक्षणभूत स्वरूप-अस्तित्व से निश्चित एक अर्थ का (द्रव्य का), स्वलक्षणभूत स्वरूप-अस्तित्व से ही निश्चित अन्य अर्थ में (द्रव्य में) विशिष्टरूप से (भिन्न-भिन्न रूप से) उत्पन्न होता हुआ अर्थ (भाव), अनेकद्रव्यात्मकपर्याय है।

जिसप्रकार एक पुद्गल की अन्य पुद्गल के संसर्ग से समानजातीय-द्रव्यपर्याय होती है; उसीप्रकार जीव और पुद्गल की संस्थानादि से विशिष्टतया (संस्थान इत्यादि के भेद सहित) उत्पन्न होती हुई असमान-जातीयद्रव्यपर्याय अनुभव में अवश्य आती है; जो ठीक ही है।''

उक्त टीका में 'अनेकद्रव्यात्मकपर्याय' पद का अर्थ व्यञ्जनपर्याय ही है। मनुष्य-देवादिरूप व्यंजनपर्यायें अलग-अलग जाति के जीव और पुद्गलों की मिली हुई होने से असमानजातीयद्रव्यपर्यायें हैं। इनमें अहंबुद्धि ही मिथ्यात्व है।

ध्यान रहे यहाँ भी पर्याय में असमानजातीयद्रव्यपर्याय को ही लिया गया है।

अस्तित्व के बारे में हम पहले ही जान चुके हैं कि वह अस्तित्व दो प्रकार का होता है।एक तो सादृश्यास्तित्व और दूसरा स्वरूपास्तित्व, जिन्हें महासत्ता और अवान्तरसत्ता भी कहते हैं। यह जो अवान्तरसत्ता या स्वरूपास्तित्व है ह्न वह प्रत्येक द्रव्य का अपना-अपना होता है और जो महासत्ता या सादृश्यास्तित्व है ह्न वह सब द्रव्यों का मिला हुआ है।

जिसप्रकार किसी व्यक्ति का जो व्यक्तिगत मकान है, वह तो उसी का है; किन्तु मन्दिर सभी का है। उसीप्रकार सम्मेदशिखर सभी का है और घर का कमरा अपना है। उसीप्रकार **उत्पाद-व्यय-ध्रौव्ययुक्तं सत्** ह्न यह जीव का भी लक्षण है और पुद्गल का भी लक्षण है अर्थात् यह लक्षण सभी द्रव्यों का है; किन्तु प्रत्येक द्रव्य के या स्वरूपास्तित्व संपन्न इकाई के लक्षण अलग-अलग हैं।

इसप्रकार एक द्रव्य का स्वरूपास्तित्व और दूसरे द्रव्य का स्वरूपा-स्तित्व ह्न ये दोनों मिलकर जो एक पर्याय बनती है, उसे अनेकद्रव्यपर्याय या व्यञ्जनपर्याय कहते हैं।

इसे हम इसप्रकार भी समझ सकते हैं कि जिसप्रकार भारत, पाकिस्तान और बांगलादेश ह्न ये सभी अपने स्वतंत्र अस्तित्व को कायम रखते हुए मिलकर एक महासंघ बना लें और उसका नाम रखें भारतीय महासंघ। यह भारतीय महासंघ अनेकद्रव्यपर्याय की भांति ही होगा।

अमेरिका में तो यही हुआ है। अमेरिका अर्थात् यू.एस.ए. में हिन्दुस्तान, पाकिस्तान जैसे केलिफोर्निया आदि अनेक देश शामिल हैं। ऐसे ५० देशों से मिलकर जो देश बना है, उसका नाम है यू.एस.ए. अर्थात् यूनाईटेड स्टेट्स ऑफ अमेरिका और उनके झण्डे में ५० बिन्दियाँ हैं, जो यह बताती हैं कि यह ५० देशों का झण्डा है अर्थात् यूनाईटेड स्टेट्स का झंडा है।

वहाँ के देश हिन्दुस्तान के राजस्थान, मध्यप्रदेश की भांति नहीं है; क्योंकि हिन्दुस्तान के राजस्थान आदि तो प्रान्त हैं और वे सभी देश हैं। सोवियत संघ भी इसीप्रकार कई देशों का समूह था।

कहने का तात्पर्य यह है कि जिसप्रकार यूनाईटेड स्टेट्स में देशों का स्वरूपास्तित्व खत्म नहीं होता, बल्कि कायम रहता है। उसीप्रकार यदि भारत महासंघ में भी पाकिस्तान को मिला लिया तो पाकिस्तान का स्वरूपास्तित्व खत्म नहीं होगा, वह देश कायम रहेगा। लेकिन भारत महासंघ के देश यूनाईटेड होने के कारण उनमें सुरक्षा का साधन अर्थात् सेना एक ही रहेगी, विदेश विभाग एक रहेगा; शेष सब काम उन देशों का रहेगा, उनमें प्रधानमंत्री या राष्ट्रपति का कोई हस्तक्षेप नहीं रहेगा।

भारत में अभी राजस्थान आदि प्रान्त है, देश नहीं। वे युनाइटेड (संगठित) नहीं, अपितु एक ही हैं। प्रान्त आदि का भेद तो मात्र व्यवस्था के लिए है।

उसीप्रकार जीव और पुद्गलों की अपनी-अपनी सत्ता का अस्तित्व कायम रहकर जो यह मनुष्यपर्याय बनी है; इसमें पुद्गल के एक भी परमाणु ने अपना अस्तित्व खोया नहीं है।

इसप्रकार हम कह सकते हैं कि स्वरूपास्तित्व वर्तमान भारत के समान इकाई (यूनिट) है और सादृश्यास्तित्व यू.एस.ए. के समान अनेक इकाइयों का संगठित समुदाय है।

गाथा १५२ की टीका में एक विशेष बात और कह दी है कि इसमें अर्थपर्याय बाधा नहीं पहुँचाती। जिसप्रकार किसी की आत्मा को सम्यग्दर्शन हो तो पुद्गल कोई हस्तक्षेप करनेवाला नहीं है और पुद्गल में रूप-रस-गंध में कोई परिवर्तन होने पर आत्मा उनमें कोई हस्तक्षेप करनेवाला नहीं है अर्थात् उनकी अर्थपर्यायें स्वतंत्ररूप से होती रहेंगी।

ये अपनी-अपनी अर्थपर्यायें एक दूसरे द्रव्य से संबंध रखती ही नहीं हैं। प्रत्येक द्रव्य अपनी-अपनी अर्थपर्यायें अर्थात् गुणपर्यायें करता रहे; तब भी, जो यह संयोगात्मक अवस्था है ह्न उसका नाम मनुष्यादि पर्यायें हैं। इन्हीं मनुष्य-देव-नारकी पर्यायों से भगवान आत्मा भिन्न है ह्न यहाँ मुख्य उद्देश्य यही बताना है।

आगे पर्यायों का परस्पर भेद बतलानेवाली १५३वीं गाथा निम्नानुसार है ह्न

णरणारयतिरियसुरा संठाणादीहिं अण्णहा जादा।
पज्जाया जीवाणं उदयादिहिं णामकम्मस्स ।।१५३।।

(हरिगीत)

तिर्यंच मानव देव नारक नाम नामक कर्म के।
उदय से पर्याय होवें अन्य-अन्य प्रकार की ।।१५३।।

मनुष्य, नारक, तिर्यंच और देव ह्न ये नामकर्म के उदयादिक के कारण जीवों की पर्यायें हैं, जो कि संस्थानादि के द्वारा अन्य-अन्य प्रकार की होती हैं।

यहाँ पर 'संस्थानादिक के द्वारा अन्य-अन्य प्रकार की होती है' का तात्पर्य यह है कि मनुष्य, नारक आदि पर्यायों में विविधता होती है। मनुष्य सुन्दर होते हैं, नारकी बहुत बुरे दिखते हैं; सबके आकार अलग-अलग होते हैं। मनुष्य, तिर्यंच आदि में मूल सामग्री अर्थात् जीव और पुद्गल समान होने के बावजूद उनमें विविधता का कारण प्रत्येक का अलग-अलग नामकर्म का उदय है।

जैसा कि इसी गाथा की टीका में कहा है ह्न

'नारक, तिर्यंच, मनुष्य और देव ह्न ये जीवों की पर्यायें हैं। वे नामकर्मरूप पुद्गल के विपाक के कारण अनेक द्रव्यों की संयोगात्मक हैं; इसलिए जैसे तुष की अग्नि और अंगार इत्यादि अग्नि की पर्यायें चूरा और डली इत्यादि आकारों से अन्य-अन्य प्रकार की होती हैं; उसीप्रकार जीव की वे नारकादि पर्यायें संस्थानादि के द्वारा अन्यान्य प्रकार की ही होती हैं।'

मनुष्य नाम आत्मा की तरफ से रखा हुआ नाम नहीं है; क्योंकि आत्मा तो उसका एक देश (अंश) है। मनुष्यगति नामकर्म के उदय से जीव और शरीर का मिलकर मनुष्य नाम पड़ा है।

हुकमचन्द भारिल्ल, पूनमचन्द छाबड़ा आदि में हुकमचन्द और पूनमचन्द मूल नाम हैं। भारिल्ल और छाबड़ा शब्द गोत्र को दर्शानेवाले हैं; वैसे ही मनुष्यजीव इस नाम में जीव गोत्र के स्थान पर है और मनुष्य नाम के स्थान पर है।

नामकर्म के उदय की ओर से मनुष्य और चेतन की ओर से जीव है। मूल नाम तो मनुष्य है। मनुष्यजीव, तिर्यंचजीव, नारकीजीव, देवजीव ऐसा नहीं बोला जाता; अपितु मनुष्य, तिर्यंच, नारकी और देव ह्न ऐसा ही कहा जाता है।

इसप्रकार नारक, तिर्यंच, मनुष्य और देव ह्न ये जीवों की पर्यायें नाम कर्मरूप पुद्गल से विपाक के कारण अन्य द्रव्यों की संयोगात्मक हैं। जिसप्रकार अग्नि तो एक है; लेकिन कंडे की अग्नि है तो वह कंडे के आकार की होती है; कोयले की अग्नि कोयले के आकार की होती है; जिसप्रकार अग्नि के आकार बदल जाते हैं; उसीप्रकार नामकर्मरूप पुद्गल विपाक के कारण जीव के आकार बदल जाते हैं।

जीव और पुद्गल के संयोग से एक अवस्था होने पर भी, उन सबकी पर्यायों में भिन्नता आने का कारण अपने-अपने नामकर्म का उदय है।

इसप्रकार यह निश्चित हुआ कि जीव तो एक ही है; पर नारक, तिर्यंच, मनुष्य और देव ह्न इन पर्यायों में भिन्नता का कारण नामकर्म के उदय से प्राप्त भिन्न प्रकार के संयोग हैं। ●

साधना चैनल पुनः आरंभ

विगत कुछ दिनों से जयपुर के आस-पास राजस्थान में साधना चैनल का प्रसारण नहीं हो पा रहा था; किन्तु अब यह भास्कर टी.वी. नेटवर्क के माध्यम से पुनः आरंभ हो गया है। अतः प्रतिदिन रात्रि में 10.20 पर डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल के प्रवचनों को देखना/सुनना न भूलें। प्रसारण में 5-7 मिनिट की देरी भी हो सकती है।

यदि निर्धारित समय से 10 मिनिट बाद तक भी प्रवचन प्रारंभ नहीं हो तो श्री पीयूषकुमारजी शास्त्री से 9414717829 अथवा (0141) 2705581 नं. पर सम्पर्क करें।

कोटा पंचकल्याणक विज्ञापन

कोटा पंचकल्याणक विज्ञापन

(पृष्ठ 3 का शेष.....)

आध्यात्मिक भजन में पाँच समवायों के माध्यम से जो सशक्त बात कही, उसने तो हृदय को ही हिला दिया। वे कहते हैं ह्न

'जाकरि जैसे जाहि समय में जो हो तब जा द्वार।
सो बनिहै टरहै कछु नाहीं, करलीनो निरधार।।
हम को कछु भय ना रे! जान लियो संसार।।'

उपर्युक्त कथन में ज्ञानी की निर्भयता का आधार भी यही है कि ह्न मैंने संसार के स्वतंत्र परिणमन का स्वरूप अच्छी तरह से समझ लिया है। इस लोक में जिस द्रव्य की जो पर्याय जिस समय में जिसविधि से जिसके द्वारा जैसी होनी होती है, उसी द्रव्य की वही पर्याय उसी समय में उसी विधि (पुरुषार्थ) पूर्वक, उसी के निमित्त द्वारा वैसी ही होती है। उसे कोई टाल नहीं सकता। आगे-पीछे नहीं कर सकता। सुख-दुःख, जीवन-मरण सब कुछ निश्चित है। यह मैंने अच्छी तरह समझ लिया है। अतः अब मुझे कुछ भी भय नहीं है।

मैंने अब इसी वस्तुस्वरूप के आधार पर सात भयों से निर्भय रहकर सम्पूर्ण प्रतिकूलताओं को सहजता से सहन कर लिया है।

इसप्रकार समता ने मुझे सर्वज्ञता के आधार पर निर्भय रहने का महामंत्र तो दिया ही है; साथ ही कार्य सम्पन्न होने के स्वतंत्र षट्कारकों, चार अभावों, पाँच समवायों का स्वरूप समझाकर पर के कर्तृत्व से निर्भार भी किया है, पराधीनता से छुटकारा भी दिला दिया है।''

कर्मकिशोर ने कहा ह्न ''जीवराज! तुमसे यह सब सुनकर मैं ह्न असमंजस में पड़ गया हूँ। तुम्हारा-हमारा अनादि का साथ था। लगता अब वह साथ शीघ्र ही छूटने वाला है। इतना दीर्घकालीन साथ-साथ छूटने का गम होना तो स्वाभाविक ही है, परन्तु तुम्हें निराकुल सुख की प्राप्ति होगी। संसार के दुःखों से सदा-सदा के लिए मुक्त हो जाओगे। अनन्तगुण प्रगट हो जायेंगे, सर्वज्ञता प्रगट होने से लोकालोक को एक साथ जानने की सामर्थ्य प्रगट हो जायेगी, परमात्मा बनकर जगत पूज्य हो जाओगे ह्न इसका भारी हर्ष है।

हमारा क्या? हमें तो अनन्त जीवों का साथ सदा बना ही रहता है। हम तुम्हें सहर्ष विदाई देंगें। तुम्हारे कल्याणकों के जोर-शोर से महोत्सव मनायेंगे। अब तुम जब तक संसार में रहोगे, यहाँ भी तुम्हारी सेवा में तत्पर रहकर तुम्हें संसार के एक से बढ़कर एक सुखद संयोग जुटायेंगे। हमें ऐसा मौका कहाँ मिलता है। बहुत कम जीव ऐसा सम्यक् पुरुषार्थ करते हैं। अधिकांश तो चौरासी लाख योनियों में ही जनम-मरण करते रहते हैं। धन्य है तुम्हें और तुम्हारी पत्नी समताश्री को, जिन्होंने मुक्तिमहल के नींव का शिलान्यास करने का संकल्प कर लिया है।''

जीवराज ने कर्मकिशोर से अपनी प्रशंसा सुनकर कहा ह्न ''भैया! यह तो तुम्हारा बढ़प्पन है, जो हमारे बारे में ऐसा कहते हो। हमने ऐसा किया ही क्या है? बस, मात्र अपनी शक्ति को ही तो जाना-पहचाना है। देखो तो सही! राई की ओट में पहाड़ था। मेरी समझ में अब आ रहा है कि **'मुक्ति का मार्ग कितना सरल है, कितना सहज है? वस्तुतः मुक्त होने के लिए बाहर में तो कुछ नहीं करना है। पर में कुछ भी करने में तो धर्म है ही नहीं। पर से तो मात्र हटना है और स्व में मात्र डटना है, मात्र इतना सा काम करना है। 'पर से खस, स्व में बस, आयेगा अतीन्द्रिय आनन्द का रस, इतना कर तो बस' अर्थात् धर्म प्राप्त करने के लिए इतना सा काम करना ही पर्याप्त है।**

आज तक यह नहीं जाना था, इस कारण यह सब झमेला था। खैर! जो होना था, वही हुआ, इसका भी क्या विकल्प करना।

कर्मकिशोर ने अन्तिम प्रश्न का स्मरण करते हुए जीवराज से कहा ह्न ''अभी तक तो सब बातों-बातों में हुआ। अब तुम यह बताओ कि तुम इन सुनहरे स्वप्नों को साकार कैसे करोगे? मुक्ति का महल बनाने के लिए तुम्हारे पास ठोस आधार क्या है? तुम्हारी भावी योजना क्या है? और मैं तुम्हारे किस काम आ सकता हूँ? मैं तुम्हारे विचारों से प्रसन्न हूँ, सहमत भी हूँ तथा मैं तुम्हारे इस काम में सहयोग भी करना चाहता हूँ? तुम मुझे मात्र अपना शत्रु ही मत समझो। मैं मुक्ति के मार्ग को प्रशस्त करने में सहयोगी की भूमिका भी निभाता रहा हूँ।

भगवान के भक्त तो भगवान के सामने ही मेरे सहयोग की दिल खोलकर प्रशंसा करते हैं। वे कहते हैं ह्न

अति पुण्य उदय मम आया, प्रभु तुमरा दर्शन पाया यदि मैं पापियों को दुर्गति में ले जाकर दण्डित करता हूँ तो धर्मात्माओं को आत्मकल्याण निमित्तभूत देव-शास्त्र-गुरु का सान्निध्य भी प्राप्त करता हूँ अतः जहाँ तुम्हें मेरे सहयोग की जरूरत महसूस हो, मैं तुम्हारा सहयोग करने को तत्पर हूँ।

जीवराज ने कर्मकिशोर के सहयोग करने की भावना का आदर करते हुए अपनी भावी योजनाओं की रूपरेखा बताते हुए कहा ह्न ''यद्यपि धर्म का मूल सम्यग्दर्शन है, यह मोक्षमहल की प्रथम सीढ़ी है; परन्तु सीढ़ी के पूर्व नींव के पत्थर का शिलान्यास करना आवश्यक है, जो कि 'वस्तुस्वातंत्र्य' का सिद्धान्त है। नींव के पत्थर की पहचान या परिचय के लिए सर्वप्रथम वीतरागी देव, निर्ग्रन्थ गुरु और अनेकान्तमयी धर्म की यथार्थ श्रद्धा आवश्यक है। इनकी यथार्थ श्रद्धा के लिए पहले देव-शास्त्र-गुरु का यथार्थ स्वरूप जानना आवश्यक है; क्योंकि इनके जाने बिना श्रद्धान किसका करें। इन्हें जानने के लिए व्यवस्थित बुद्धि होना जरूरी है।

इन सबके लिए दुर्व्यसनों का त्याग अनिवार्य है। अतः सर्वप्रथम हमें बुद्धिपूर्वक सात व्यसनों का त्याग, अष्ट मूलगुणों का धारण, नित्यदेवदर्शन, नियमित स्वाध्याय और अहिंसक आचरण करना आवश्यक है।''

जीवराज ने कहा ह्न ''यद्यपि ये क्रियायें धर्म नहीं है, मुक्ति महल के नींव के पत्थर नहीं हैं। इन सबसे कर्मकिशोर! तुम्हारा परिवार ही बढ़ेगा ह्न यह मैं अच्छी तरह जानता हूँ, परन्तु मैं तुम्हारे परिवार की प्रकृति को अब अच्छी तरह पहचानने लगा हूँ। उन सबका काम तो जो/जैसा मैं अपनी स्वयं की योग्यता से करता हूँ अथवा जैसा जीव भला-बुरा अपने हिताहित के काम करता है, उसमें अनुकूल-प्रतिकूल निमित्त बन जाना तेरे परिवार की प्रकृति है। अतः यदि मैं धर्माचरण रूप कार्य करूँगा तो तेरा परिवार मुझे उसमें भी अनुकूल बाह्य संयोग मिलाने में निमित्त बनेगा।''

यह समझाकर जीवराज ने कर्मकिशोर को अपनी भावी योजना में धर्माचरण को न केवल प्राथमिक आवश्यकता बताया बल्कि धर्माचरण करने की आद्योपान्त रूपरेखा भी बताई। धर्माचरण में सामूहिक स्वाध्याय कर सर्वाधिक समय देने का संकल्प किया; क्योंकि स्वाध्याय के द्वारा ही तो मुक्तिमहल की नींव के पत्थर का शिलान्यास संभव हो सकेगा। **(क्रमशः)**

(एक केटली गर्म पानी, पृष्ठ 2 का शेष.....)

कुछ समय तक युद्धविराम की स्थिति रही, क्योंकि दोनों ही ओर यह गंभीर मंथन चल रहा था कि स्थिति नाजुक है ह्न इसमें क्या किया जा सकता है ? शक्तिशाली महारथियों से घिरा मैं भी किंकर्तव्यविमूढ़ था। कुछ समझ में नहीं आ रहा था कि क्या करूँ ? परिस्थिति की गंभीरता मेरी समझ में आ रही थी, पर मैं भी.....।

जब तक मुझमें थोड़ी-बहुत भी समझ शेष रही, मैं किसी निर्णय पर नहीं पहुँच सका; क्योंकि मैं किसी पर आक्रमण करने की स्थिति में तो था ही नहीं, पानी का सवाल भी समाप्त ही हो गया था, समझौता वार्ता की संभावना भी क्षीण ही थी; क्योंकि कोई मध्यस्थ रहा ही नहीं था, इज्जत के साथ आत्मसमर्पण करानेवाला कोई जयप्रकाश भी दिखाई नहीं दे रहा था। समझदारों की ओर से समझदारी की आशा करना तो रेत में से तेल निकालने जैसा था, सो मैंने सोचा ह्न जब मरना ही है तो वीरता से ही क्यों न मरा जाय?

मेरी पकड़ में और कुछ तो था नहीं, तो मैंने आक्रोश व्यक्त करने के लिए औंधे पड़े खाली घड़े पर ही आक्रमण कर दिया और सभी महारथी एकदम मुझ पर टूट पड़े।

फिर क्या हुआ? यह कहना संभव नहीं है; क्योंकि इतने में मेरी आँख खुल गई। जब मैंने घड़ी देखी तो उसमें प्रातः के चार बज रहे थे, ब्रह्ममुहूर्त था।

इस विचित्र स्वप्न ने मेरे मन को मथ डाला। यद्यपि मैं जाग रहा था; पर मेरी स्थिति स्वप्न जैसी ही हो रही थी; क्योंकि मैं अपने को उसके प्रभाव से मुक्त नहीं कर पा रहा था।

कहते हैं कि ब्रह्ममुहूर्त में देखे स्वप्न सत्य होते हैं, पर इस स्वप्न में क्या सच्चाई हो सकती है ? सोचते-सोचते मैं स्वप्न की गहराई में उतरने लगा। अब मेरी समझ में यह नहीं आ रहा था कि मैं जाग रहा हूँ या स्वप्न ही देख रहा हूँ। मैं कुछ नहीं कह सकता कि मैं जाग रहा था या सो रहा था, सोच रहा था या स्वप्न देख रहा था। जो कुछ भी हो, इससे क्या अन्तर पड़ता है, पर जो मैं जान रहा था, वह यह है कि स्वप्न के सत्य होने का अर्थ मात्र किसी घटना के सत्य होने से ही नहीं होता; अपितु उसमें किसी सत्य का उद्घाटन भी हो सकता है, उसमें हमें कोई मार्गदर्शन भी हो सकता है, पर जब हम उसके संकेतों को समझें, तभी उसकी सत्यता की प्रतीति हो सकती है।

क्या इस स्वप्न में इस परम सत्य का उद्घाटन नहीं हो रहा है कि हम नासमझों को सुधारने के बहाने कितनी नासमझी कर रहे हैं। क्या किसी की आवश्यक आवश्यकताओं की माँग को जिद कहा जा सकता है? क्या किसी की धीमी आवाज को सुनने की हमारी क्षमता समाप्त हो गई है? यदि वह अपनी उचित माँग को ऊँची आवाज में प्रस्तुत करता है तो क्या उसे विद्रोह की संज्ञा दी जा सकती है? यदि कोई अपना काम स्वयं कर लेना चाहता है, अपने पैरों पर खड़ा होना चाहता है तो क्या उसे सहयोग करने की आवश्यकता नहीं है?

क्या भूखी-नंगी-गूँगी जनता की आवाज सुनने की हमारी क्षमता समाप्त हो गई है? क्या हम उसकी धीमी पुकार सुनने में सर्वथा असमर्थ हो गये हैं, क्या हम उसकी पुकार को विद्रोह की संज्ञा तो प्रदान नहीं कर रहे हैं?

आवश्यकता उसकी जायज माँगों को पूरी करने की है या उसे विद्रोह कह कर दबाने की है? क्या इसी तरह का व्यवहार हम अपने बच्चों के साथ भी तो नहीं कर रहे हैं? ये कुछ प्रश्न हैं, जिनका उत्तर हमें देना है।

क्या परिवार और देश दोनों की स्थिति का सम्यक् निर्देश देने वाले इस स्वप्न की सत्यता से इन्कार किया जा सकता है ? ●

समयसार सप्ताह सी. डी. का विमोचन

श्रवणबेलगोला (कर्ना.) : वर्ष 2005 के अंतिम दिन 31 दिसम्बर को आचार्य श्री वर्धमानसागरजी महाराज द्वारा समयसार सप्ताह सी.डी. का सैट विमोचन किया गया। विमोचन के उपरान्त सी.डी. का सैट, भट्टारक स्वस्ति श्री चारुकीर्तिजी-जैनमठ, श्रवणबेलगोल को सी.डी. के निर्देशक श्री अखिल बंसल द्वारा भेंट की गई।

ज्ञातव्य रहे कि दिनांक 9 से 13 अक्टूबर तक सिद्धान्त चक्रवर्ती आचार्य श्री विद्यानन्दजी मुनिराज के सान्निध्य में कुन्दकुन्द भारती भवन दिल्ली में तत्त्ववेत्ता डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल द्वारा समयसार ग्रन्थ की महत्वपूर्ण गाथाओं का सारभूत विवेचन किया गया था, जिसके 13 प्रवचनों की 13 सी.डी. निर्मित की गई है। सी.डी. का सैट बिक्री के लिये 300 रुपये में उपलब्ध है।

पता- श्री टोडरमल स्मारक भवन, ए-4, बापूनगर, जयपुर-15

नूतन वर्षाभिनन्दन प्रतियोगिताओं से

सोलापुर (महा.) : यहाँ महावीर भवन में दिनांक 31 दिसम्बर को नववर्ष की पूर्व संध्या पर पण्डित प्रशांतजी मोहरे एवं पण्डित रवीन्द्रजी काले के संयोजकत्व में धार्मिक अंताक्षरी प्रतियोगिता का आयोजन हुआ तथा दिनांक 1 जनवरी 2006 को विविध विषयों पर संगोष्ठी का आयोजन किया गया; जिसमें उक्त दोनों विद्वानों के अतिरिक्त पण्डित सुरेशजी कोठड़िया एवं पण्डित राजकुमारजी आलंदकर ने जिनागम के विभिन्न पहलुओं पर अपने विचार व्यक्त किये। गोष्ठी का संचालन पण्डित विक्रान्तजी शहा, सोलापुर ने किया।

वैराग्य समाचार

1. **कलोल (गुज.)** निवासी रतनचन्द आत्माराम शाह का दिनांक 4 जनवरी 2006 को शांत परिणामों में देहावसान हो गया । आप विगत 50 वर्षों से अविरल तत्त्वज्ञान का लाभ लेते रहे थे। जयपुर के शिविरों में भी आप अत्यन्त भावपूर्वक धर्मलाभ लेते थे।

2. **सहारनपुर (उ.प्र.)** निवासी अश्विनकुमार जैन की दादी श्रीमती रामकली जैन धर्मपत्नी श्री प्रद्युम्नकुमारजी जैन की द्वितीय पुण्यतिथि पर 502/- रुपये प्राप्त हुये; एतदर्थ धन्यवाद !

3. **पुणे (महा.)** निवासी श्रीमती फेन्सीबाई धर्मपत्नी श्री शेषमलजी जैन का दिनांक 23 दिसम्बर, 2005 को शांत परिणामों पूर्वक देहावसान हो गया है। आप धर्मप्रेमी तथा स्वाध्यायी थे। आप देवलाली में रहकर धर्मलाभ लिया करती थीं। आपकी स्मृति में श्री हंसमुखलालजी की ओर से 500 रुपये प्राप्त हुये; एतदर्थ धन्यवाद !

4. **हिसार (हरियाणा)** निवासी श्री नरेशकुमारजी जैन एडवोकेट का दि. 29 दिसम्बर को आकस्मिक निधन हो गया है। आप उत्कृष्ट समाजसेवी थे। धार्मिक एवं सामाजिक आयोजनों में आपका सदैव योगदान रहता था।

सभी दिवंगत आत्मायें शीघ्र ही अभ्युदय को प्राप्त हों - यही भावना है।

आवश्यकता

महाराष्ट्र प्रान्त तत्त्वप्रचार-प्रसार समिति, नागपुर को प्रवचन, पाठशाला एवं विधान आदि कार्य को भली प्रकार संभाल सके ऐसे मराठी-हिन्दी भाषी विद्वान की आवश्यकता है। अत: निम्न पते पर सम्पर्क करें। **ह्न श्री विश्वलोचनकुमार जैनी,**

हिराकुटीर, मस्कासाथ नागपुर-02 मो. 9422146642

रजिस्ट्रेशन आर. एन. आई. 31109/77

अमृत-महोत्सव सानन्द सम्पन्न

मनोहरलाल काला

इन्दौर (म.प्र.) : यहाँ साधनानगर स्थित जिनमंदिर में श्री मनोहरलालजी काला के 75 वाँ जन्मोत्सव **अमृत-महोत्सव** के रूप में मनाया गया। इस अवसर पर दिनांक 14 से 18 दिसम्बर, 05 तक एक सौ सत्तर तीर्थंकर मण्डल विधान एवं शिविर का आयोजन किया गया।

विधि-विधान के समस्त कार्य ब्र. जतीशचन्दजी शास्त्री, सनावद के निर्देशन में पण्डित अभयकुमारजी शास्त्री देवलाली, पण्डित सुबोधजी शास्त्री शाहगढ़ एवं पण्डित सुनीलजी 'धवल' भोपाल ने सम्पन्न कराये।

पंचदिवसीय इस अमृत महोत्सव में पण्डित रतनचन्दजी भारिल्ल जयपुर, पण्डित राजेन्द्रकुमारजी जबलपुर, पण्डित पूनमचन्दजी छाबडा इन्दौर, पण्डित अभयकुमारजी शास्त्री देवलाली एवं पण्डित सुशीलजी राघौगढ़ आदि ने अपने मार्मिक व्याख्यानों द्वारा अमृत बरसाया ।

दिनांक 16 दिसम्बर को आध्यात्मिक कवि सम्मेलन का आयोजन किया गया। दिनांक 17 दिसम्बर को पण्डित पूनमचन्दजी छाबड़ा की अध्यक्षता एवं पण्डित रतनचन्दजी भारिल्ल के मुख्यातिथ्य में एक विद्वत संगोष्ठी का आयोजन हुआ । **जैनदर्शन में आध्यात्मिक शिक्षा की उपयोगिता** विषय पर श्री अशोक बड़जात्या, डॉ. एम. पी. जैन (सहायक संचालक शिक्षा विभाग) भोपाल, पण्डित विराग शास्त्री के अतिरिक्त मुख्य वक्ता पण्डित अभयजी शास्त्री ने तर्कसंगत विचार प्रस्तुत किये। गोष्ठी का संचालन पण्डित राजकुमारजी शास्त्री बांसवाड़ा ने एवं आभार प्रदर्शन श्री विजयजी बड़जात्या ने किया।

दिनांक 18 दिसम्बर, 2005 को श्री मनोहरलालजी काला का सम्मान समारोह (अमृत महोत्सव) आयोजित किया गया; जिसकी अध्यक्षता श्री अशोक बड़जात्या ने की। अतिथियों में पण्डित रतनचन्दजी भारिल्ल के अतिरिक्त संहितासूरि पण्डित नाथूलालजी शास्त्री, पण्डित विमलचन्दजी झांझरी, पण्डित रमेशचन्दजी बांझल, पण्डित रमेशजी दाऊ जयपुर, श्री राजेन्द्रजी सेठी, श्री राजेन्द्रजी पहाड़िया, श्री देवकुमारसिंहजी कासलीवाल, श्री कैलाशजी चौधरी, पं. तेजकुमारजी गंगवाल मंचासीन थे। अतिथियों का स्वागत श्री विजय बड़जात्या ने तथा संचालन पण्डित अभयकुमारजी शास्त्री ने किया।

इस अवसर पर श्री पदमजी पहाडिया ने कालाजी का परिचय दिया । साथ ही '**अध्यात्मरसिक श्री मनोहरलाल काला अभिनन्दन सारिणी-2005**' नामक पुस्तक का विमोचन किया गया। समारोह में इन्दौर के अतिरिक्त विभिन्न स्थानों से पधारे संगठन प्रतिनिधियों एवं प्रमुख व्यक्तियों द्वारा माल्यार्पण एवं शॉल भेंटकर कालाजी का स्वागत किया गया। आभार प्रदर्शन श्री सुशीलजी व राजेशजी काला ने किया। **ह्न अशोक बड़जात्या**

आ.समन्तभद्र पुरस्कार : संजीव गोधा को

जयपुर (राज.) : यहाँ दि. जैन तेरहपंथी बड़ा मंदिर में रविवार, दिनांक 8 जनवरी, 2006 को दिगम्बर जैन महासमिति, जयपुर (पूर्व संभाग) द्वारा डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल की प्रेरणा से प्रतिवर्ष एक जैन दर्शन एवं विद्या के क्षेत्र में कार्यरत युवा विद्वान को सम्मानित करने का निर्णय लिया गया। इसी शृंखला की प्रथम कड़ी के रूप में **पण्डित संजीवकुमारजी गोधा, जयपुर** को जैनदर्शन एवं वीतरागी तत्त्वज्ञान के प्रचार-प्रसार में उनके उत्कृष्ट योगदान को ध्यान में रखते हुये **आचार्य समन्तभद्र पुरस्कार** से सम्मानित किया गया; जिसके अन्तर्गत उन्हें प्रशस्ति-पत्र, 11 हजार रुपये की नगद राशी, शॉल एवं श्री फल भेंटकर सम्मानित किया गया।

इस अवसर पर आयोजित सभा के अध्यक्ष अन्तर्राष्ट्रीय ख्यातिप्राप्त डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल ने वर्तमान समय में युवा विद्वानों को प्रोत्साहन की बात पर विशेष बल दिया। मुख्य अतिथि के रूप में महासमिति के राष्ट्रीय कार्याध्यक्ष श्री महेंद्रकुमारजी पाटनी, भारत जैन महामण्डल के कार्याध्यक्ष श्री राजकुमारजी काला तथा वयोवृद्ध विद्वान पण्डित ज्ञानचन्दजी बिलटीवाला मंचासीन थे।

सम्माननीय विद्वान का परिचय पण्डित पीयूषजी शास्त्री ने दिया। पुरस्कार भेंटकर्त्ता डॉ. एस.बी.पापड़ीवाल थे। इस अवसर पर मंदिर का परिचय देते हुये श्री विनयजी पापड़ीवाल ने यहाँ पण्डित टोडरमलजी से चल रही 250 वर्षों की शास्त्र प्रवचन परम्परा का उल्लेख किया एवं महासमिति का परिचय श्री महेन्द्रजी पाटनी ने दिया। कार्यक्रम का संचालन श्री मणीभद्रजी पापड़ीवाल ने किया।

ज्ञातव्य है कि पण्डित संजीवकुमारजी गोधा वर्तमान में वीतराग-विज्ञान (मासिक) एवं जैनपथप्रदर्शक (पाक्षिक) के प्रबन्ध सम्पादक तथा श्री टोडरमल दि. जैन सिद्धान्त महाविद्यालय के वरिष्ठ अध्यापक हैं साथ ही श्री तेरहपंथियान बड़ा मंदिर में विगत 15 वर्षों से नियमित स्वाध्याय सभा चला रहे हैं। जयपुर में अन्य भी अनेक स्थानों पर धार्मिक गतिविधियाँ संचालित करने में आपका महत्त्वपूर्ण योगदान रहता हैं। **ह्न प्रद्युम्न पाटनी**

जैनपथप्रदर्शक (पाक्षिक) जनवरी (द्वितीय)2006
RJ / J. P. C / FN-064 / 2006-08

प्रति,

सम्पादक : **पण्डित रतनचन्द भारिल्ल** शास्त्री, न्यायतीर्थ, साहित्यरत्न, एम.ए., बी.एड.
प्रबन्ध सम्पादक : **पण्डित संजीवकुमार गोधा,** डबल एम.ए. जैनविद्या व धर्मदर्शन तथा इतिहास, नेट एवं **पण्डित जितेन्द्र वि.राठी,** साहित्याचार्य
प्रकाशक एवं मुद्रक : **ब्र. यशपाल जैन** द्वारा जैनपथप्रदर्शक समिति के लिए जयपुर प्रिण्टर्स प्रा.लि., एम. आई. रोड, जयपुर से मुद्रित तथा त्रिमूर्ति कम्प्यूटर्स, ए-4, बापूनगर, जयपुर से प्रकाशित।

यदि न पहुँचे तो कृपया निम्न पते पर भेजें -
ए- 4 बापूनगर, जयपुर - 302015 (राज.)
फोन : (0141) 2705581, 2707458
तार : त्रिमूर्ति, जयपुर **फैक्स :** 2704127